International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(4): 256-258

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(4): 256-258
© 2017
www.anantaajournal.com
Received: 03-05-2017
Accepted: 04-06-2017

डॉ0 पुनीत कुमार मिश्र
योग एवं प्राकृतिक चिकित्सक, पं. श्रीराम शर्मा आचार्य पारमार्थिक चिकित्सालय, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ.प्र., भारत

Correspondence
डॉ0 पुनीत कुमार मिश्र
योग एवं प्राकृतिक चिकित्सक, पं. श्रीराम शर्मा आचार्य पारमार्थिक चिकित्सालय, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ.प्र., भारत

जैन धर्म–दर्शन में तपयोग–मीमांसा

डॉ0 पुनीत कुमार मिश्र

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन में जैन दर्शन का महत्त्वपूर्ण स्थान है, जिसकी गणना श्रमण दर्शन में होती है। श्रमण शब्द 'श्रम' धातु से बना है जिसका अर्थ– परिश्रमी होता है। किन्तु यहाँ पर श्रमण उसे कहा गया है जिसने परिश्रम किया और परिणामस्वरूप शांतिलाभ प्राप्त किया है।[1] जैन भिक्षु या साधु को श्रमण कहा जाता है[2] जो पूर्णतः हिंसादि का प्रत्याख्यान करते और सर्वविरत कहलाते हैं। श्रमण को पांच महाव्रतों– सर्वप्राणपात, सर्वमृषावाद, सर्वअदत्तादान, सर्वमैथुन और सर्वपरिग्रह विरमण को तन, मन तथा कर्म से पालन करना पड़ता है।[3] संसार का सबसे प्राचीन धर्म श्रमणों का धर्म कहलाता है। सिन्धु घाटी सभ्यता से मिले जैन धर्म से संबंधित अवशेष और जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभ देव जी का उल्लेख वेदों में मिलता है जो जैन धर्म के प्राचीन होने की प्रामाणिकता सिद्ध करते हैं।[4]

तीर्थंकर परम्परा भगवान् आदिनाथ से प्रारंभ होकर महावीर स्वामी जो कि अन्तिम व 24 वें तीर्थंकर हैं, तक चलती है। भगवान् महावीर ने जैन धर्म का संरक्षण, संवर्द्धन, विकास, सुधार तथा प्रचार–प्रसार किया, उनको (महावीर स्वामी को) जिन्[5] अर्थात् विजेता कहा जाता है।[6] डॉ0 राधाकृष्णन के शब्दों में– वे सांसारिक युद्ध में पराक्रम दिखाने वाले वीर न थे, वरन् आन्तरिक जीवन के द्वन्द्व में वीरता दिखाने वाले महावीर थे।[7] भगवान् महावीर को वर्द्धमान, वीर, सन्मति तथा अतिवीर नामों से भी जाना जाता है।[8]

जैन धर्म का अर्थ है– 'जिन द्वारा प्रवर्तित धर्म'। जैन उन्हें कहते हैं जो जिन के अनुयायी हों। जिन शब्द–'जि' धातु से बना है जिसका अर्थ है– जीतना और जिन का अर्थ है– 'जीतने वाला' यानी जिन्होंने अपने मन, वाणी तथा काया को जीत लिया और विशिष्ट ज्ञान को पाकर सर्वज्ञ और पूर्णज्ञानी हो गए, उन आप्त पुरूषों को जिनेश्वर अर्थात् जिन कहा

डॉ0 पुनीत कुमार मिश्र, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सक, पं.श्रीराम शर्मा आचार्य पारमार्थिक चिकित्सालय, गायत्री तपोभूमि, मथुरा (उ.प्र.)

जाता है। जैन धर्म अर्थात्– 'जिन भगवान का धर्म'[9]। ई0पू0 599 में जन्मे भगवान् महावीर ने पूर्व तीर्थंकरों के धर्म और परम्पराओं को सुव्यवस्थित रूप देकर निर्वाण प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया।[10] अहिंसा जैन धर्म का मूल सिद्धान्त है।[11]

जैन धर्म–दर्शन से संबंधित ग्रन्थों का अवलोकन करने पर जैन धर्म के 10 लक्षणों का वर्णन मिलता है, उनमें से कुछ लक्षण मुनि पतंजलि कृत योगसूत्र में वर्णित यम–नियम के अंगों से भी मिलते हैं जिसमें नियम की शुरूआत 'तप' से होती है और जैन धर्म में 'तप' का विशेष महत्त्व है। 'तप' शब्द हठयोग, क्रियायोग और अष्टांग योग के अन्तर्गत है जो योग की विविध शाखाओं के रूप में है और इस सृष्टि के उद्भव का मूल कारण– तप ही है।

मानव जीवन का परमलक्ष्य अपनी आत्मा को परमात्मा के पवित्र चरणों में समर्पित करते हुए परमपद प्राप्तकर आत्मशान्ति और आनन्द प्राप्त करना है। जैन धर्म का सबसे पवित्र पर्व पर्वाधिराज पर्यूषण पर्व है जिसे दश लक्षण पर्व भी कहते हैं जो दिगम्बर सम्प्रदाय में प्रतिवर्ष भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि से प्रारंभ होकर चतुर्दशी तिथि तक बड़े धूम–धाम से मनाया जाता है। चतुर्दशी तिथि, अनन्त चतुर्दशी कहलाती है जिसका जैन धर्म में विशेष महत्त्व है। यह पर्यूषण पर्व जैन धर्म में दिगम्बर सम्प्रदाय के अनुयायियों के लिए आत्मप्रक्षालन और पापमोचन का पवित्र सुअवसर होता है, पंचमी से चतुर्दशी तिथि तक ये 10 दिन, 10 लक्षणों को दर्शाते हैं, जिसको साधक अपने जीवन में आचरित कर मुक्ति का मार्ग स्वयं प्रशस्त करता है।[12] इस पर्व में व्यक्ति का व्यक्तित्व ही नहीं बल्कि आत्मा भी सुसंस्कारित, पवित्र और शुद्ध होती है। यह पर्व आत्मा को सुसंस्कारित करने के साथ–साथ सामाजिक समरसता व स्वास्थ्य लाभ और वैश्विक प्रेम तथा शान्ति का सन्देश देता है।

जैन धर्म में वर्णित धर्म के 10 लक्षण–

1. **क्षमा–** क्रोध की उत्पत्ति होते हुए भी परिणामों में मलीनता न होना क्षमा है।[13]
2. **मार्दव–** उत्तम जाति, कुल, रूप, विज्ञान और ऐश्वर्य वगैरह के होते हुए भी उनका घमण्ड न करना मार्दव है।[14]
3. **आर्जव–** मन, वचन और काय की कुटिलता का न होना आर्जव है।[15]
4. **शौच–** लोभ का अत्यन्त अभाव शौच है।[16]

इन सभी लक्षणों को योगदर्शन में वर्णित नियम के अंगों के अंतर्गत, बाह्य एवं आभ्यन्तर शौच और संतोष के रूप में जानना चाहिए।

5. **सत्य–** सज्जन पुरुषों में सुन्दर वचन बोलना सत्य धर्म है।[17] यह लक्षण योग दर्शन में यम के अन्तर्गत है।[18]
6. **संयम–** इन्द्रियों के विषयों में राग का न होना इन्द्रिय संयम है।[19] इसे योग दर्शन में नियम तथा प्रत्याहार के अन्तर्गत जानना चाहिए।[20]
7. **तप–** कर्मों को क्षय करने के लिए अनशन करना तप है।[21] जो योगदर्शन में नियम के अन्तर्गत वर्णित है।[22]
8. **त्याग–** चेतन और अचेतन परिग्रह को छोड़ना त्याग है।[23] यह लक्षण योगदर्शन में यम के अन्तर्गत है।[24]
9. **अकिंचन–** शरीर वगैरह से ममत्व न रखना अकिंचन है।[25] यह लक्षण योगदर्शन में नियम के अन्तर्गत है।[26]
10. **ब्रह्मचर्य–** पूर्व में भोगी हुई स्त्री का स्मरण न करना और अपनी आत्मा में ही लीन रहना ब्रह्मचर्य है।[27] यह यम के अन्तर्गत है।[28]

इन सभी 10 लक्षणों में तप ही मुख्य है और जैन धर्म में तप का विशद् वर्णन मिलता है जिसमें तप को मोक्ष का मूल साधन माना गया है।

तपस् या तप का मूल अर्थ– प्रकाश होता है जो सूर्य या अग्नि के समान तेजयुक्त होता है। किन्तु धीरे–धीरे उसका एक रूढ़ार्थ विकसित होकर किसी उद्देश्य विशेष की प्राप्ति और शरीर, मन तथा आत्मीय अनुशासन बनाए रखने के लिए दैनिक कष्ट प्राप्त किये जाने के संदर्भ में होने लगा। तप शब्द से आशय है कि मन, इन्द्रिय तथा कषायों को तपाना।[29] तप का लक्षण है– इच्छाओं को रोकना और रोकने का उद्देश्य है– रत्नत्रय को प्राप्त करना ताकि मोक्ष को प्राप्त किया जा सके। 'सम्यक् दर्शन–ज्ञान–चारित्राणि मोक्षमार्गः'[30] जैन धर्म में 12 प्रकार के तपों का वर्णन मिलता है जिसमें 6 बाह्य तथा 6 आभ्यन्तर प्रकार के तपों का वर्णन है। भगवान् ऋषभदेव इन 12 प्रकार के तपों को अपने जीवन में सदैव करते थे।

बाह्य तप के भेद–

1. **अनशन तप–** ख्याति, पूजा, मन्त्रसिद्धि वगैरह लौकिक फल की अपेक्षा न करके, संयम की सिद्धि, राग का उच्छेद, कर्मों का विनाश, ध्यान तथा स्वाध्याय की सिद्धि के लिए भोजन का त्याग करना अनशन तप है।[31]

अनशन तप में चार प्रकार के आहार का त्याग किया जाता है–

1. खाद्य 2. स्वाद्य 3. लेह्य 4. पेय

2. अवमौदर्य तप– संयम को जाग्रत रखने के लिए, विकारों को दूर करने के लिए, संतोष व स्वाध्याय आदि की सुखपूर्वक सिद्धि के लिए अल्प–आहार करना अवमौदर्य तप कहलाता है।[32] अवमौदर्य तप यानी भूख से कम खाने से कर्मों की निर्जरा होती है।

3. वृत्तिपरिसंख्यान तप– जब मुनि शिक्षा के लिए निकलें तो घरों का नियम करना कि मैं आहार के लिए इतने घर जाऊँगा अथवा अमुक रीति से आहार मिलेगा तो ही लूँगा। इसे वृत्तिपरिसंख्यान तप कहा जाता है। तप के लिए कुछ संख्या तय (निश्चित) करके संकल्प कर लेने के बाद शेष का परित्याग वृत्तिपरिसंख्यान तप कहलाता है।[33]

4. रस परित्याग तप– यह तप भोजन की आशा को रोकने के लिए किया जाता है। इन्द्रियों के दमन, निद्रा पर विजय पाने के लिए, सुखपूर्वक स्वाध्याय के लिए घी, दूध, तेल, दही, मीठा तथा नमक का यथायोग्य त्याग करना रसपरित्याग तप कहलाता है।[34] रसपरित्याग तप इसलिए आवश्यक है क्योंकि इस रसना लोलुपता से ही शिकार तथा मांसाहार को प्रोत्साहन मिलता है। पं. प्रवर आशाधर जी बताते हैं कि – 1. मक्खन खाने से तृष्णा बढ़ती है। 2. मांस इन्द्रियों में मद पैदा करता है। 3. शहद से असंयम होता है।[35]

5. विविक्तशय्यासन तप– ब्रह्मचर्य, स्वाध्याय तथा ध्यान आदि की सिद्धि के लिए एकान्त में रहना तथा शयन करना और आसन लगाना विविक्तशय्यासन तप है। विविक्त शब्द से तात्पर्य है– जहाँ विकार के साधन नहीं होते हैं और स्वाध्याय तथा ध्यान में बाधा नहीं आती है।[36]

6. कायक्लेश तप– कष्ट सहने का अभ्यास आराम तलबी की भावना को दूर करने के लिए तथा ग्रीष्म ऋतु में वृक्ष के नीचे ध्यान लगाना, शीत ऋतु में खुले मैदान पर सोना, अनेक प्रकार के आसन जैसे– वीरासन, मकरासन तथा सूर्याभिमुख योग करना कायक्लेश तप हैं।[37] धूप में पड़े रहना, रात्रि में न सोना, न खुजाना, स्नान न करना तथा दांत न रगड़ना आदि कायक्लेश, तप हैं।[38] यह योगदर्शन में नियम के अन्तर्गत वर्णित है।

अन्तरंग तप के भेद– जो तप मन को वश में करने के लिए किए जाते हैं, उनको अंतरंग तप कहते हैं।

1. **प्रायश्चित तप–** प्रमाद से लगे हुये दोषों को दूर करना प्रायश्चित तप है। मोक्ष साध्य की प्राप्ति हेतु प्रायश्चित तप आवश्यक है।[39]
2. **विनय तप–** पूज्य पुरूषों का आदर करना विनय तप कहलाता है।[40]
3. **वैयावृत्य तप–** शरीर–वगैरह द्वारा सेवा–सुश्रुषा करने को वैयावृत्य तप कहते हैं।[41]
4. **स्वाध्याय तप–** आलस्य त्यागकर ज्ञान का आराधन करना स्वाध्याय तप कहलाता है।[42] यह तप, योगसूत्र में नियम के अन्तर्गत है।[43]
5. **व्युत्सर्ग तप–** ममत्व के त्याग को व्युत्सर्ग तप कहते हैं।[44]
6. **ध्यान तप–** चित्त की चंचलता को दूर करने के लिए ध्यान तप है।[45]

इन आभ्यन्तर तपों के उपभेदों का वर्णन इस तरह से है–

1. प्रायश्चित तप के 9 भेद हैं।[46]

1. आलोचना 2. प्रतिक्रमण 3. तदुभय यानी आलोचना और प्रतिक्रमण 4. विवेक 5. व्युत्सर्ग 6. तपच्छेद 7. मूल 8. परिहार 9. उपस्थापना।

2. विनय तप के चार भेद हैं।[47]

1. ज्ञान विनय 2. दर्शन विनय 3. चरित्र विनय 4. उपचार विनय।

3. वैयावृत्य तप के 10 भेद हैं।[48]

1. आचार्य 2. उपाध्याय 3. तपस्वी 4. शैक्ष 5. ग्लान 6. गण 7. कुल 8. संघ 9. साधु 10. मनोज्ञ।

4. स्वाध्याय तप के पांच भेद हैं।[49]

1. वाचना 2. पृच्छना 3. अनुप्रेक्षा 4. आम्नाय 5. धर्मोपदेश।

5. व्युत्सर्ग तप के 2 भेद हैं।[50]

1. बाह्य उपाधि भेद 2. आभ्यंतर उपाधि भेद।

6. ध्यान तप के 4 भेद हैं।[51]

1. आर्त्त 2. रौद्र 3. धर्म 4. शुक्ल।

पुरुषार्थसिद्धि उपाय में अमृत चन्द्राचार्य देव जी कहते हैं कि जैनागम में चरित्र के अन्तवर्ती होने से तप को भी मोक्ष का अंग माना गया है।[52] मन को वशीभूत करने हेतु तप का आचरण करना चाहिए।[53] मुनि पतंजलि के अनुसार– 'कायेन्द्रिय सिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः'[54] अर्थात्– तप के प्रभाव से जब अशुद्धि का नाश हो जाता है, तब शरीर और इन्द्रियों की शुद्धि हो जाती है। स्वधर्म पालन के लिए व्रत–उपवास आदि करना और उसके पालन में जो भी कष्ट हो, उनको सहर्ष सहन करना, तप कहलाता है। 'तपः द्वन्द्व सहनम्'[55] अर्थात्– द्वन्द्वात्मक परिस्थितियों को स्वीकार अथवा सहन करने का नाम तप है।

पूज्यपाद स्वामी ने सर्वार्थ सिद्धि में कहा है कि जो कर्मों के क्षय के लिए तपा जाए, वह तप है।[56] आत्मशुद्धि के लिए इच्छाओं को शान्त करना तप है। इच्छाएँ सांसारिक बाहरी पदार्थों में चक्कर लगाया करती हैं और शरीर के सुख–साधनों को ढूँढा करती हैं अतः प्रमादी न बनने के लिए बहिरंग तप किए जाते हैं और मन की सभी वृत्तियाँ आत्मसुखी हों, उसके लिए बहिरंग और अन्तरंग तपों का विधान जैन धर्म–दर्शन में वर्णित है और दोनों प्रकार के तप आत्मशुद्धि के लिए अमोघ साधन के रूप में हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची

1. हिन्दू सभ्यता, राधामुकुंद मुकर्जी, पृ. 252
2. भारतीय दर्शन, शोभा निगम, पृ. 13
3. श्रमण परम्परा, विकिपीडिया
4. जैन धर्म का इतिहास, विकिपीडिया
5. भारतीय दर्शन की रूपरेखा, प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, पृ. 143
6. भारतीय दर्शन, शोभा निगम, पृ. 75
7. हमारी संस्कृति, एस. राधाकृष्णन, पृ. 86
8. महावीर, विकिपीडिया
9. जैन धर्म, विकिपीडिया
10. जैन धर्म, वेबदुनिया.काम
11. जानें जैन धर्म को, वेबदुनिया.काम
12. पर्यूषण पर्व, विकिपीडिया
13. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
14. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
15. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
16. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
17. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/7
18. योगसूत्र, 2/30
19. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
20. योगसूत्र, 2/54
21. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
22. योगसूत्र, 2/32
23. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
24. योगसूत्र, 2/30
25. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
26. योगसूत्र, 2/32
27. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/6
28. योगसूत्र, 2/30
29. जैन धर्म एवं संस्कृति , पृ. 83
30. तत्त्वार्थधिगम् सूत्र, उमास्वाति, 2–3
31. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 222
32. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 228
33. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 85
34. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 228
35. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 85
36. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 86
37. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 228
38. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 86
39. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 229
40. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 229
41. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 229
42. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 229
43. योगसूत्र, 2/32
44. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 229
45. तत्त्वार्थ सूत्र, पृ. 229
46. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/22
47. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/23
48. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/24
49. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/25
50. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/26
51. तत्त्वार्थ सूत्र, 9/27
52. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 82
53. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 83
54. योगसूत्र, 2/43
55. योग विज्ञान, स्वामी विज्ञानानंद सरस्वती, पृ. 88
56. जैन धर्म एवं संस्कृति, पृ. 83